

॥ श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ॥

अध्याय 8: अक्षरब्रह्मयोग

3/3 (श्लोक 20-28), रविवार, 02 जुलाई 2023

विवेचक: गीता विशारद श्री श्रीनिवास जी वर्णेकर

यूट्यूब लिंक: <https://youtu.be/oT5agr26biU>

निरन्तर भगवत् स्मरण ही परम गति प्राप्त करने का मार्ग

प्रार्थना, दीप प्रज्वलन, भगवान के सुन्दर विग्रह के दर्शन और गुरु वन्दना के साथ श्री वेदव्यास जी एवं परम पूज्य स्वामी श्री गोविन्द देव गिरि जी को नमन कर के आज के विवेचन सत्र का शुभारम्भ हुआ।

श्रीमद्भगवद्गीता का आठवाँ अध्याय अक्षरब्रह्मयोग के विषय में बताता है। हम सभी पर भगवान की असीम कृपा है जो हम श्रीमद्भगवद्गीता से जुड़ गए हैं। श्रीमद्भगवद्गीता के साथ जुड़ जाना अर्थात् परमात्मा के साथ जुड़ जाने के बराबर है। श्रीमद्भगवद्गीता भगवान श्रीकृष्ण की वाङ्मयी मूर्ति के समान है।

सातवें अध्याय में ज्ञान विज्ञान के बारे में श्रीभगवान ने अर्जुन को बताने के लिए कुछ शब्दों का प्रयोग किया। उन शब्दों की व्याख्या पूछने के लिए अर्जुन ने जो प्रश्न पूछे वहाँ से आठवाँ अध्याय प्रारम्भ होता है-

किं तद्ब्रह्म किमध्यात्मं किं कर्म पुरुषोत्तम ।
अधिभूतं च किं प्रोक्तमधिदैवं किमुच्यते ॥ 8.1॥

अधियज्ञः कथं कोऽत्र देहेऽस्मिन्मधुसूदन ।
प्रयाणकाले च कथं ज्ञेयोऽसि नियतात्मभिः ॥ 8.2॥

ब्रह्म क्या है? अध्यात्म क्या है? कर्म क्या है? अधिभूत किसको कहा गया है? अधिदेव किसको कहा जाता है? अधियज्ञ कौन है? मृत्यु का समय समीप आने पर परमात्मा को किस प्रकार जाना जा सकता है?

श्रीभगवान ने अर्जुन के छः प्रश्नों के उत्तर स्पष्ट रूप से दिए तत्पश्चात् अन्तिम प्रश्न का उत्तर भगवान विस्तार से दे रहे हैं-

तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च ।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयम् ॥ 8.7॥

भगवान कहते हैं सर्वदा मेरा स्मरण करो क्योंकि-

**यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम् ।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः ॥8.6॥**

हे कुन्ती पुत्र अर्जुन! मनुष्य अन्त काल में जिस भी भाव का स्मरण करते हुए शरीर छोड़ता है वह उस भाव से भावित होता हुआ उसको ही प्राप्त होता है। मृत्यु का समय कब आएगा यह किसी को पता नहीं है इसलिए हमेशा भगवान का स्मरण करते रहना चाहिए। भगवान बताते हैं योगी अपना देह त्याग किस प्रकार करते हैं?

**सर्वद्वाराणि संयम्य मनो हृदि निरुध्य च ।
मूर्ध्नि ध्यायात्मनः प्राणमास्थितो योगधारणाम् ॥8.12॥**

**ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन् ।
यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम् ॥8.13॥**

अर्थात् ओङ्कार शब्द का उच्चारण करते हुए अपने प्राणों को मस्तक के मध्य में स्थापित करते हुए जो योगी अपने शरीर को छोड़ते हैं वह परम गति को प्राप्त होते हैं।

**आब्रह्मभुवनाल्लोकाः पुनरावर्तिनोऽर्जुन ।
मामुपेत्य तु कौन्तेय पुनर्जन्म न विद्यते ॥8.16॥**

श्रीभगवान आगे बताते हैं, हे अर्जुन! ब्रह्मलोक तक जितने भी लोक हैं स्वर्गलोक, देवलोक, वहाँ तक जाने वालों को भी पुनः लौट कर इस संसार में आना पड़ता है परन्तु जो मुझे प्राप्त हो जाता है अर्थात् जो परमात्मा को प्राप्त हो जाता है उसका पुनर्जन्म नहीं होता।

हमें यह समझ लेना आवश्यक है कि भगवान कृष्ण जो गीता का व्याख्यान दे रहे हैं कोई साधारण व्यक्ति नहीं है बल्कि वह साक्षात् परब्रह्म परमात्मा हैं।

इसके पश्चात् श्रीभगवान ब्रह्माजी का दिन कितना बड़ा है? उनकी रात कितनी बड़ी है? उनकी आयु कैसी है? आदि बातों के बारे में बताते हैं-

**अव्यक्ताद्यक्तयः सर्वाः प्रभवन्त्यहरागमे ।
रात्र्यागमे प्रलीयन्ते तत्रैवाव्यक्तसञ्ज्ञके ॥8.18॥**

अर्थात् सारा संसार अव्यक्त रूप से व्यक्त रूप धारण करता है। अव्यक्त या जिसे आँखों से नहीं देखा जा सकता, कानों से सुना नहीं जा सकता जिन्हें हम अपनी इन्द्रियों से नहीं देख सकते, नहीं जान सकते, वह अव्यक्त है। जब ब्रह्माजी का दिन आरम्भ होता है तो यह सारा संसार व्यक्त रूप धारण कर लेता है। जब ब्रह्माजी की रात होती है तब यह सारा संसार ब्रह्माजी के सूक्ष्म शरीर में लीन हो जाता है, अर्थात् सब कुछ अव्यक्त रूप में चला जाता है।

इसका अनुभव हम प्रतिदिन करते हैं। मान लीजिए किसी ने आज बहुत सुन्दर आभूषण खरीदे। उसने उन्हें सम्भाल कर एक तिजोरी में रख दिया और वह रात को सो गए। जब हम सो जाते हैं तो सारे संसार को भूल जाते हैं। प्रातः जागते हैं तो संसार पुनः याद आ जाता है। ऐसे ही ब्रह्मा जी की रात में सम्पूर्ण सृष्टि लीन हो जाती है और दिन में पुनः उत्पन्न हो जाती है। इसलिए निद्रा को भी नित्य प्रलय का एक रूप कहा गया है। रात होने पर वह सब सामान, आभूषण वहीं रहते हैं परन्तु अव्यक्त हो जाते हैं।

उदाहरण के लिए हम देखते हैं कि आजकल वर्षा ऋतु है। वर्षा होती है तो बहुत सारे कीट पतङ्गे उत्पन्न हो जाते हैं। उन थोड़े से घण्टों में उनकी प्रजाति उत्पन्न भी होती है और नष्ट भी हो जाती है। यदि उनकी दृष्टि से हम अपने जीवन की तुलना करें तो हमारा जीवन उनसे बहुत बड़ा है। इसी प्रकार यदि हम ब्रह्माजी के जीवन से अपने जीवन की तुलना करें तो उनका एक दिन

एक हज़ार चतुर्युगों से मिलकर बनता है और एक हज़ार चतुर्युगों के बीतने पर ब्रह्माजी की एक रात होती है। जिस प्रकार हमारी पृथ्वी के सूर्य का एक चक्कर लगाने पर हमारा एक दिन बीतता है, उसी प्रकार ब्रह्माजी के लिए जब पूरे ब्रह्माण्ड का एक चक्कर लगता है तो उनका एक दिन बीतता है। ब्रह्माण्ड कितना बड़ा है इसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते। जैसे हम मानते हैं कि वह तारा पृथ्वी से चार हज़ार प्रकाश वर्ष दूर है। इस प्रकार लाखों तारों से मिलकर ब्रह्माण्ड बना है। इसलिए हम उनके समय की, उनके जीवन की कल्पना नहीं कर सकते।

इसी के आधार पर एक व्यङ्ग की रचना है-

एक व्यक्ति ने ब्रह्माजी को प्रसन्न करने के लिए बहुत तपस्या की। जब ब्रह्माजी प्रसन्न हो गए। उसके सामने प्रकट हुए और बोले तुम्हें क्या चाहिए। वह व्यक्ति उनकी बहुत स्तुति करने लगा कि आप के समय का तो कोई पार ही नहीं है। आपका एक सेकण्ड हमारे हजारों वर्षों के बराबर है। इसी प्रकार आपका एक पैसा हमारे लाखों रुपए-पैसों के बराबर है तो ब्रह्माजी बोले कि तुम्हें क्या चाहिए वह बोलो? व्यक्ति ने कहा मुझे आपका एक पैसा दे दीजिए। ब्रह्माजी बोले एक मिनट ठहरो अभी देता हूँ। यदि मनुष्य को ब्रह्माजी के एक मिनट के लिए रुकना होगा तो उसके तो पता नहीं कितने जीवन बीत जाएँगे।

भूतग्रामः स एवायं भूत्वा भूत्वा प्रलीयते।

रात्र्यागमेऽवशः पार्थ प्रभवत्यहरागमे ॥ 8.19॥

हे पार्थ! यह प्राणी समुदाय अर्थात् भूतों का समुदाय बार-बार उत्पन्न हो होकर नष्ट हो जाता है। जैसे हम रात को सो जाते हैं तो हमारे लिए यह दुनिया मृतप्रायः हो जाती है। हमें यहाँ यह ध्यान रखना है कि नष्ट कुछ नहीं होता। जैसे विज्ञान में भी यह कहा जाता है- "**Energy can never be destroyed nor created.**" यह एनर्जी दूसरे रूप में परिवर्तित हो सकती है किन्तु नष्ट नहीं हो सकती। भगवान कहते हैं यह भूत ग्राम उत्पन्न होकर प्रकृति के पर वश में ब्रह्मा के दिन के समय उत्पन्न होता है और रात्रि के समय लीन हो जाता है। यह निर्माण होना, विलीन होना यह चलता ही रहता है। इस प्रकार संसार का वर्णन करके आगे के श्लोक में भगवान परमात्मा की महिमा का वर्णन करते हैं।

8.20

**परस्तस्मात्तु भावोऽन्योऽव्यक्तोऽव्यक्तात्सनातनः ।
यः (स) स सर्वेषु भूतेषु, नश्यत्सु न विनश्यति ॥ 8.20॥**

परन्तु उस अव्यक्त (ब्रह्मा के सूक्ष्म शरीर) से अन्य (विलक्षण) अनादि अत्यंत श्रेष्ठ भाव रूप जो अव्यक्त (ईश्वर) है, वह संपूर्ण प्राणियों के नष्ट होने पर भी नष्ट नहीं होता।

विवेचनः- श्रीभगवान कहते हैं परन्तु एक बात है अर्जुन- ब्रह्मा के सूक्ष्म शरीर से अन्य, अनादि, अत्यन्त श्रेष्ठ एक भाव है जो अव्यक्त है और वह सम्पूर्ण प्राणियों के नष्ट होने पर भी नष्ट नहीं होता। वेदान्तों में जिसे परब्रह्म कहा जाता है जिसे जानने की हमें कोशिश करनी चाहिए। उसे किस प्रकार प्राप्त करें? यह हम एक उदाहरण से समझते हैं-

दुकान में हमें सोना मिलता है, वह सोना हमें सोने के बिस्किट के रूप में भी मिलता है और अड़गूठी के रूप में भी मिलता है। चाहे उस बिस्किट की कीमत बहुत है, उसमें चमक भी भरपूर है किन्तु उसे अड़गूठी की तरह धारण नहीं कर सकते, उसे कङ्कन की तरह पहन नहीं सकते। यदि हम उसे सुनार के पास ले जाएँ तो वह उसे पिघला कर हमारा मनचाहा आभूषण बनाकर हमें दे देगा। अब यदि हम सोचें कि वह बिस्किट नहीं रहा वह तो आभूषण बन गया किन्तु यदि फिर चाहा जाए तो उस आभूषण को पिघलाकर फिर से बिस्किट बनाया जा सकता है। इसमें यदि समझा जाए तो केवल स्वर्ण तत्त्व खरा है, सच्चा है। उसको अलग-अलग रूप दिए जा सकते हैं।

जिस प्रकार एक सरोवर में हवा के चलने से लहरें बनती हैं। उसी सरोवर के जल को यदि एक मटके में डाल दिया जाए तो वह उसका रूप ले लेगा। मूल तत्त्व जल है। वह रहेगा ही, यदि उसे मटके में डाल दो तो भी वही रहेगा, यदि गिलास में डाल दो तो

भी वह जल ही रहेगा। इसी प्रकार जो मूल रूप है वह सनातन है। चाहे संसार व्यक्त हो या अव्यक्त हो वह हमेशा रहेगा। सब कुछ नष्ट हो जाए तो भी वह वैसे का वैसा ही रहता है। जैसे गणित के सिद्धान्त के अनुसार "इंफिनिटी माइनस इंफिनिटी-इनफिनिटी", ही रहता है।

**ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥**

अर्थात् वह पूर्ण ब्रह्म है। वह व्यक्त हो या अव्यक्त हो वह पूर्ण है। पूर्ण से यदि पूर्ण भी निकाल लो तो भी वह पूर्ण ही रहेगा। जैसे परब्रह्म श्रीकृष्ण के रूप में अवतरित हो गए तो वह परब्रह्म भी पूर्ण हैं और यह श्रीकृष्ण भी पूर्ण हैं।

8.21

**अव्यक्तोऽक्षर इत्युक्तः(स्), तमाहुः(फ्) परमां(ङ्) गतिम् ।
यं(म्) प्राप्य न निवर्तन्ते, तद्धाम परमं(म्) मम ॥ 8.21 ॥**

उसी को अव्यक्त (और) अक्षर ऐसा कहा गया है (तथा उसी को) परम गति कहा गया है (और) जिसको प्राप्त होने पर (जीव) फिर लौटकर (संसार में) नहीं आते, वह मेरा परमधाम है।

विवेचन:- श्रीभगवान कहते हैं कि उसी अव्यक्त को, अक्षर को जिसका कभी क्षर नहीं होता, कभी अन्त नहीं होता उसी को परम गति कहा गया है। उस परमात्मा को व्यक्त भी कह सकते हैं। वह व्यक्त है या अव्यक्त है यह सोचने की कोई आवश्यकता नहीं।

एक समय ठाकुर श्री रामकृष्ण देव के पास उनके दो भक्त झगड़ा करते हुए गए। उन्होंने कहा ठाकुर हमारी एक समस्या है- एक भक्त ने कहा मेरा कहना है कि परमात्मा निर्गुण निराकार हैं, तो ठाकुर जी बोले कि ठीक बात है। दूसरे भक्त ने कहा कि परमात्मा सगुण साकार हैं, इस पर ठाकुर जी बोले यह बात भी ठीक है। ठाकुर जी पहले भक्त से बोले कि तुम्हारा परमात्मा निर्गुण निराकार है तो क्या वह सर्वशक्तिमान है? तो भक्त बोला मेरा परमात्मा सर्वशक्तिमान है। अब दूसरे भक्त से बोले कि तुम्हारा परमात्मा सगुण साकार है तो क्या वह सर्वशक्तिमान है? दूसरा भक्त भी बोला जी ठाकुर जी मेरे परमात्मा भी सर्वशक्तिमान हैं। ठाकुर जी बोले कि जब दोनों ही सर्वशक्तिमान है तो क्या सर्वशक्तिमान सगुण परमात्मा निर्गुण निराकार का रूप नहीं ले सकता या निर्गुण परमात्मा सगुण साकार का रूप नहीं ले सकता? इसलिए यह झगड़ा करने का विषय नहीं है। परमात्मा अक्षर हैं, उनका कोई अन्त नहीं है, उन्हीं को परम गति कहा गया है। जिसको प्राप्त करने के बाद प्राणी संसार में लौटकर नहीं आता है। भगवान कहते हैं वही मेरा परमधाम है।

पन्द्रहवें अध्याय में भगवान कहते हैं-

**न तद्भासयते सूर्यो न शशाको न पावकः ।
यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम ॥15.6॥**

अर्थात् उस परम पद को न सूर्य, न चन्द्रमा, न अग्नि ही प्रकाशित कर सकती है। जिसको प्राप्त करके प्राणी संसार में लौटकर नहीं आता वही मेरा परमधाम है।

8.22

पुरुषः(स्) स परः(फ्) पार्थ, भक्त्या लभ्यस्त्वनन्यया ।

यस्यान्तःस्थानि भूतानि, येन सर्वमिदं(न) ततम् ॥ 8.22 ॥

हे पृथानन्दन अर्जुन! संपूर्ण प्राणी जिसके अंतर्गत हैं (और) जिससे यह संपूर्ण संसार व्याप्त है, वह परम पुरुष परमात्मा तो अनन्य भक्ति से प्राप्त होने योग्य हैं।

विवेचन:- हे पृथा नन्दन अर्जुन! सम्पूर्ण प्राणी जिसके अन्तर्गत हैं, जिसके अन्दर समाए हुए हैं। जिसने यह सारा संसार व्याप्त कर लिया है, वह परम पुरुष परमात्मा तो अनन्य भक्ति से ही प्राप्त हो सकता है।

भक्ति को अनन्य कहने का तात्पर्य है कि भक्ति के साथ थोड़ा भी अहम का भाव न रहे। किसी भी तरफ कोई खिंचाव न रहे। सब कुछ भगवान का ही है, ऐसा अनुभव करना ही अनन्य भक्ति है।

जैसे एक बालक के पिता सुबह जल्दी काम पर चले जाते व रात को देरी से लौटते तब तक वह सो जाता, उसका जन्मदिन आने पर भी उसके पिता वहाँ नहीं आ सके। उन्होंने उसके लिए ढेर सारे खिलौने भेज दिए तो उस बालक ने उनके लिए एक पत्र लिखा कि मुझे आपके खिलौने नहीं चाहिए, मुझे आप चाहिए। यह उस बालक का अपने पिता के प्रति अनन्य प्रेम है। उसे केवल वही चाहिए, उनकी दी हुई वस्तुएँ नहीं चाहिए। इसी प्रकार मनुष्य को परमात्मा ढेर सारे प्रलोभन, ढेर सारी वस्तुएँ देते हैं। वह उन्हीं में उलझा रह जाता है। यदि वह उनमें न उलझे और केवल उन्हीं परमात्मा को चाहे तो यह उसकी उनके प्रति अनन्य भक्ति होगी।

अब आगे श्लोकों में किस मार्ग से जाने वाले लौट कर नहीं आते और किस मार्ग से जाने वाले लौट कर वापस आते हैं, इन दोनों मार्गों का वर्णन किया गया है।

8.23

यत्र काले त्वनावृत्तिम्, आवृत्तिं(ञ्) चैव योगिनः । प्रयाता यान्ति तं(ङ्) कालं(म्), वक्ष्यामि भरतर्षभ ॥ 8.23 ॥

परन्तु, हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ अर्जुन! जिस काल अर्थात् मार्ग में शरीर छोड़कर गए हुए योगी अनावृत्ति को प्राप्त होते हैं अर्थात् पीछे लौट कर नहीं आते और (जिस मार्ग में गए हुए) आवृत्ति को प्राप्त होते हैं अर्थात् पीछे लौट कर आते हैं, उस काल को अर्थात् दोनों मार्गों को मैं कहूँगा।

विवेचन:- हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ अर्जुन! जिस मार्ग में शरीर छोड़कर गए हुए योगी अनावृत्ति को प्राप्त होते हैं अर्थात् पीछे लौट कर नहीं आते और जिस मार्ग में गए हुए आवृत्ति को प्राप्त होते हैं, जिनको पीछे लौट कर आना पड़ता है, उस काल को अर्थात् दोनों मार्गों को अब मैं तुमसे कहूँगा।

8.24

अग्निर्ज्योतिरहः(श्) शुक्लः(ष्), षण्मासा उत्तरायणम् । तत्र प्रयाता गच्छन्ति, ब्रह्म ब्रह्मविदो जनाः ॥ 8.24 ॥

प्रकाश स्वरूप अग्नि का अधिपति देवता, दिन का अधिपति देवता, शुक्ल पक्ष का अधिपति देवता, और छः महीनों वाले उत्तरायण का अधिपति देवता है, उस मार्ग से (शरीर छोड़कर) गए हुए ब्रह्मवेत्ता पुरुष (पहले ब्रह्मलोक को प्राप्त होकर पीछे ब्रह्मा के साथ) ब्रह्म को प्राप्त हो जाते हैं।

विवेचन:- श्रीभगवान कहते हैं कि जिस मार्ग में ज्योति है, अग्नि का प्रकाश है, यज्ञ का प्रकाश है अर्थात् मनुष्य कर्म कर रहा है।

दिन का प्रकाश है, जिसकी बुद्धि सतेज है, शुक्ल पक्ष है, जिसमें चन्द्रमा विकसित होते जाते हैं। जब उत्तरायण का काल होता है

अर्थात् जिस समय दिन बड़े होते हैं, ऐसा माना जाता है कि आकाश साफ होता है। उसी प्रकार उस मनुष्य का अन्तर्मन स्वच्छ होता है, साफ है, उसके अन्तर्मन में इच्छाएँ नहीं होती हैं। मात्र उस परमात्मा को पाने की इच्छा होती है।

उस समय पर ब्रह्म को जानने वाले शरीर छोड़कर गए हुए पुरुष, ब्रह्म को प्राप्त हो जाते हैं।

8.25

**धूमो रात्रिस्तथा कृष्णः(ष), षण्मासा दक्षिणायनम् ।
तत्र चान्द्रमसं(ज) ज्योतिः(र), योगी प्राप्य निवर्तते ॥ 8.25 ॥**

धूम का अधिपति देवता, रात्रि का अधिपति देवता, कृष्ण पक्ष का अधिपति देवता, और छह महीनों वाले दक्षिणायन का अधिपति देवता है, (शरीर छोड़कर) उस मार्ग से गया हुआ योगी (सकाम मनुष्य) चन्द्रमा की ज्योति को प्राप्त होकर लौट आता है अर्थात् जन्म-मरण को प्राप्त होता है।

विवेचन:- श्रीभगवान कहते हैं कि जिस मार्ग में धुँ के कारण अन्धेरा होता है, रात्रि का समय होता है, कृष्ण पक्ष होता है, दक्षिणायन का समय होता है। उस मार्ग से गया हुआ योगी मनुष्य, चन्द्रलोक तक जाकर लौट आता है अर्थात् जन्म-मरण को प्राप्त होता है।

8.26

**शुक्लकृष्णे गती ह्येते, जगतः(श) शाश्वते मते ।
एकया यात्यनावृत्तिम्, अन्ययावर्तते पुनः ॥ 8.26 ॥**

क्योंकि शुक्ल और कृष्ण यह दोनों गतियाँ अनादि काल से जगत (प्राणीमात्र) के साथ सम्बन्ध रखने वाली मानी गई है। इनमें से एक गति में जाने वाले को लौटना नहीं पड़ता और दूसरी गति में जाने वाले को पुनः लौटना पड़ता है।

विवेचन:- श्रीभगवान कहते हैं कि अनादि काल से शुक्ल और कृष्ण यह दोनों गतियाँ प्राणी मात्र के साथ सम्बन्ध रखने वाली मानी गई हैं। एक गति में जाने वाले को लौटना पड़ता है और दूसरी गति में जाने वाले को पुनः लौटना नहीं पड़ता।

8.27

**नैते सृती पार्थ जानन्, योगी मुह्यति कश्चन ।
तस्मात्सर्वेषु कालेषु, योगयुक्तो भवार्जुन ॥ 8.27 ॥**

हे पृथानन्दन! इन दोनों मार्गों को जानने वाला कोई भी योगी मोहित नहीं होता। अतः हे अर्जुन! तू() सब समय में योगयुक्त, (समता में) स्थित हो जा।

विवेचन:- श्रीभगवान कहते हैं कि इन दोनों मार्गों को जानने वाला कोई भी योगी मोहित नहीं होता। योगी आनन्द मार्ग पर, परमात्मा को प्राप्त करने के मार्ग पर चलने में आनन्द प्राप्त करता है। जिस प्रकार लोग द्वारकाधीश के दर्शन करने को जाते हैं लेकिन वहाँ जाकर भी इतनी भीड़ के कारण उनके दर्शन नहीं कर पाते केवल कलश के दर्शन करके प्रसन्नता को प्राप्त करते हैं।

भगवान कहते हैं, अर्जुन तू भी उस समय में जो योग युक्त है उस में स्थित हो जा। जिसमें ऐसा निश्चय हो कि मुझे तो केवल परमात्म तत्त्व की प्राप्ति करनी है। हमें भगवान के हाथ में अपना हाथ दे देना चाहिए कि आप मेरा हाथ थाम के रखिए। मेरे से तो भूल हो सकती है किन्तु आप मुझे अवश्य थाम के रखेंगे, ऐसा मन में दृढ़ विश्वास रखना चाहिए। जैसे माँ अपने बच्चे का हाथ पकड़े रहती है। यदि बच्चा माँ का हाथ पकड़ेगा तो हाथ छूट सकता है किन्तु यदि माँ ने हाथ पकड़ा हुआ है तो वह बच्चा अवश्य अपने लक्ष्य पर पहुँच जाएगा। हमें यह विश्वास रखना चाहिए कि यह भगवद्गीता हमें सही मार्ग दिखाती है। हमें उसके

चिन्तन में लगे रहना है, भगवद्गीता के साथ जुड़े रहना है। हमेशा यह कहना है कि हे भगवान! मैं आपका हूँ। मैं और कुछ नहीं जानता हूँ।

8.28

वेदेषु यज्ञेषु तपः(स) सु चैव,
दानेषु यत्पुण्यफलं(म) प्रदिष्टम् ।
अत्येति तत्सर्वमिदं(म) विदित्वायोगी,
परं(म) स्थानमुपैति चाद्यम् ॥ 8.28 ॥

योगी (भक्त) इसको (इस अध्याय में वर्णित विषय को) जानकर वेदों में, यज्ञों में, तपों में तथा दान में जो- जो पुण्यफल कहे गए हैं, उन सभी पुण्यफलों का अतिक्रमण कर जाता है और आदिस्थान परमात्मा को प्राप्त हो जाता है।

विवेचन:- जो योगी मनुष्य परमात्मा को पाने के मार्ग पर निरन्तर चलते जाते हैं और विश्वास रखते हैं कि मैं योग मार्ग पर चल रहा हूँ और एक न एक दिन मुझे परमात्मा की प्राप्ति अवश्य हो जाएगी। वह यज्ञ, दान, अति उत्तम कार्य जो भी करता है उन सब के फल को परमात्मा को अर्पण करता जाता है। वह समझ लेता है इन सभी यज्ञ, दान, धर्म के फल से उत्तम फल परमात्मा की प्राप्ति है।

वह जानता है कि यदि बहुत बड़ा यज्ञ कर लिया तो स्वर्ग की प्राप्ति हो सकती है। जितना बड़ा दान दिया उतना बड़ा धन लाभ हो सकता है। वह इन सब के पुण्य फल से जो ऊपर आदि स्थान है, उस परमात्मा को प्राप्त करने का प्रयास करता है। व्यक्ति को एकमात्र परमात्मा को प्राप्त करने के लक्ष्य में लगे रहना चाहिए। जो योगी इन सभी को जानकर इन सभी पुण्य फलों का अतिक्रमण कर देता है वह परमात्मा को प्राप्त हो जाता है। भगवद्गीता में बताए हुए अलग-अलग योग मार्ग, हमें एक ही मार्ग, परमात्मा तक ले जाते हैं।

भगवान बुद्ध के शिष्य दो वृक्षों के नीचे बैठकर भगवान का ध्यान कर रहे थे। जब भगवान वहाँ पहुँचे तो एक शिष्य की आँखें खुल गई। उसने देखा कि भगवान बुद्ध सामने खड़े हैं। उसने पूछा कि भगवान! मुझे आत्मज्ञान कब प्राप्त होगा? उन्होंने कहा तुम जिस वृक्ष के नीचे बैठे हो उसके जितने पत्ते हैं, उतने ही जन्म तुम्हें आत्मज्ञान प्राप्त करने में लगेंगे। वह शिष्य घबरा गया कि इतने जन्म लगेंगे। उनकी बात होते-होते दूसरे शिष्य की भी आँख खुल गई। उसने भी पूछा कि भगवान! मुझे आत्मज्ञान कब प्राप्त होगा? उन्होंने उसे भी यही जवाब दिया कि जिस वृक्ष के नीचे तुम बैठे हो उस पर जितने पत्ते हैं, उतने ही जन्म तुम्हें आत्मज्ञान प्राप्त करने में लगेंगे। तो इस शिष्य ने कहा बहुत अच्छी बात है इतने जन्म में तो पक्का मुझे आत्मज्ञान मिल जाएगा। हमें अपने मार्ग पर भरोसा होना चाहिए। हमें विश्वास होना चाहिए कि यह मार्ग बिल्कुल सही है और एक न एक दिन हमें भगवान की प्राप्ति अवश्य होगी।

श्रीभगवान के इस उत्तम सन्देश के साथ आज के विवेचन सत्र का समापन, ईश्वर के चरणों में समर्पण के साथ हुआ।

तत्पश्चात् प्रश्नोत्तर सत्र आरम्भ हुआ:-

प्रश्नकर्ता: रश्मि दीदी

प्रश्न: निर्वाण के दो मार्ग बताए गए हैं। वे सभी के लिए हैं या केवल योगी पुरुषों के लिए?

उत्तर: यह प्राणी मात्र के लिए बताए गए मार्ग हैं। यह सभी के लिए हैं। हमें मार्ग में अधोगति की तरफ नहीं जाना चाहिए। हम सभी को परमात्मा की प्राप्ति का लक्ष्य रखना चाहिए।

प्रश्नकर्ता: गोपाल भैया

प्रश्न: जब हमारा पुनर्जन्म होता है तो हमारी शिक्षा समाप्त हो जाती है और हमें फिर से करनी होती है। क्या हमारी आध्यात्मिक शिक्षा भी समाप्त हो जाती है?

उत्तर: हमारी आध्यात्मिक शिक्षा समाप्त नहीं होती है। वह जहाँ से छूटी होती है वहीं से ही हम आगे प्रारम्भ करते हैं।

श्रीभगवान छठे अध्याय में बताते हैं-

अर्जुन उवाच-

अयतिः श्रद्धयोपेतो योगाच्चलितमानसः ।

अप्राप्य योगसंसिद्धिं कां गतिं कृष्ण गच्छति ॥6.37॥

अर्जुन पूछते हैं कि भगवान जिनकी आपके साधन में श्रद्धा है पर जिनका योग अन्त समय में अगर विचलित हो जाए तो उनकी क्या गति होती है?

प्राप्य पुण्यकृतां लोकानुषित्वा शाश्वतीः समाः ।

शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोऽभिजायते ॥6.41॥

अर्थात् श्रीभगवान कहते हैं कि वह योग भ्रष्ट पुण्य कर्म करने वाला अनेक लोकों को प्राप्त करके शुद्ध श्रीमन्तों के घर में जन्म लेता है। भगवान कहते हैं वह योगियों के कुल में जन्म लेता है। इस प्रकार संसार में उसे दुर्लभ जन्म की प्राप्ति होती है। इस प्रकार वह आगे की शिक्षा आरम्भ करता है।

**ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासु उपनिषत्सुब्रह्मविद्यायां (म) योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
अक्षरब्रह्मयोगो नाम अष्टमोऽध्यायः ॥8॥**

इस प्रकार ॐ तत् सत् - इन भगवन्नामों के उच्चारणपूर्वक ब्रह्मविद्या और योगशास्त्रमय श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप श्रीकृष्णार्जुनसंवाद में 'अक्षरब्रह्मयोग' नामक आठवाँ अध्याय पूर्ण हुआ।



हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

<https://vivechan.learngeeta.com/feedback/>

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!

हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचें। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !

हर घर गीता, हर कर गीता!

आइये हम सब गीता परिवार के इस ध्येय से जुड़ जायें, और अपने इष्ट-मित्र -परिचितों को गीता कक्षा का उपहार दें।

<https://gift.learngeeta.com/>

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करें।

<https://vivechan.learngeeta.com/>

॥ गीता पढ़े, पढ़ाये, जीवन में लाये ॥

॥ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ॥